भारतीय संस्कृति एवं विरासत

खंड- 2

By MANIKANT SINGH

- वैदिक काल (1500 ई.पू.-600 ई.पू.)
- बुद्ध काल (600 ई.पू.-400 ई.पू.)
- मौर्य काल (400 ई.पू.-200 ई.पू.)
- मौर्योत्तर काल (200 ई.पू.-300 ई.)
- गुप्त काल (300 ई.-600 ई.)
- गुप्तोत्तर काल (600 ई.-750 ई.)
- पूर्व मध्यकाल (750 ई.-1200 ई.)

परिवर्तन को रेखांकित करना-

- राजनीतिकः 1. राज्य, साम्राज्य, राजवंश एवं शासक
- 2. प्रशासनिक संरचना
- आर्थिकः शिल्प एवं उद्योग, व्यापार, मौद्रिक लेनदेन तथा नगरीकरण।
- सामाजिकः वर्ण एवं जाति, महिलाओं, शूद्रों एवं अछूतों की दशा।
- सांस्कृतिकः धर्म एवं दर्शन, भाषा एवं साहित्य, कला- स्थापत्य कला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत एवं नृत्य कला, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी।

खंड-2

उपखंड-1

वैदिक काल से पूर्व मध्यकाल तक राजनीतिक दशा एवं दिशा

(Political scenario from Vedic perod to Pre Medieval Period)

By Manikant Singh

❑ वैदिक काल (1500 ई.पू. से 600 ई.पू.): राज्य, साम्राज्य, राजवंश एवं शासक

वैदिक काल

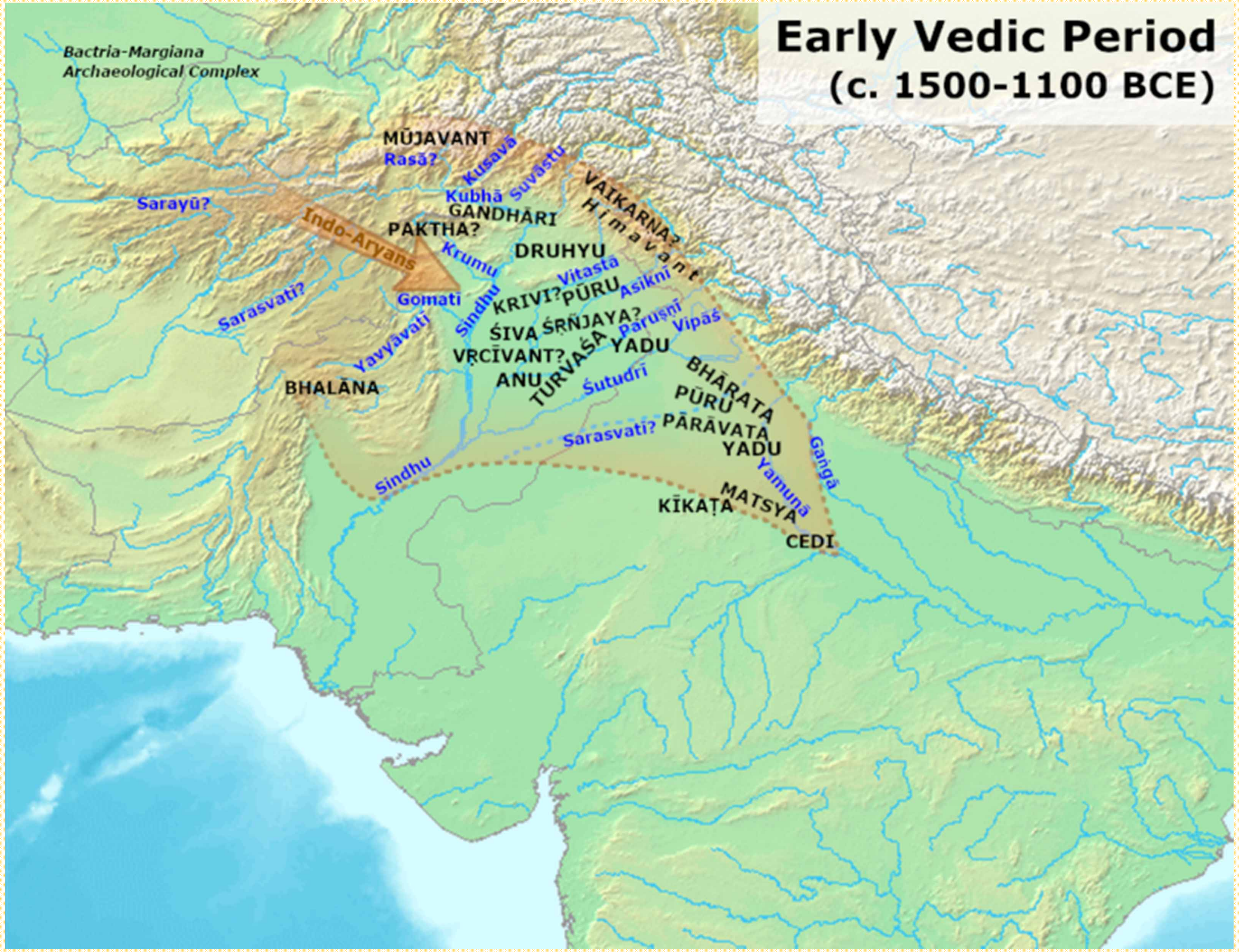

- ‘आर्य’ शब्द नस्लीय समूह की जगह भाषाई समूह का व्यंजक है। वैदिक आर्यों का आगमन बाहर से हुआ था। माना जाता है कि लगभग 1500 ई.पू. में वैदिक आर्यों का आगमन मध्य एशिया से होते हुए पश्चिम एशिया, ईरान, इराक से होते हुए भारत की ओर हुआ। 1400 ई. पू. के मितन्नी अभिलेख अथवा बोगजकोई अभिलेख से आर्यों के आगमन की सूचना मिलती है। इस अभिलेख में इन्द्र, मित्र, वरुण एवं नासत्य नामक देवता का जिक्र किया गया है।
- आरम्भ में आर्यों के आगमन की व्याख्या आर्य आक्रमण के संदर्भ में करने का प्रयास किया गया था, परन्तु वह धारणा खण्डित हो चुकी है। अब उसकी जगह आर्यों के आप्रवर्जन (migration) का सिद्धान्त दिया गया है। इसका अर्थ है कि आर्य अलग-अलग समय में और छोटे-छोटे कबीले में बँटकर आए थे। पाँच कबीलों के समूह को ‘पंचजन’ कहा जाता था। इनमें यदु, द्रुहु, अनु, पुरु एवं तुर्वस थे। इनसे पृथक ‘भरत’ कबीला था, जो सबसे महत्वपूर्ण और शक्तिशाली था। इसका संबंध अग्नि पूजा से जोड़ा जाता है।

- ऋग्वैदिक आर्य अर्द्ध-घुमक्कड़ जीवन जीते थे और वे निम्नलिखित क्षेत्रों में फैले हुए थे- पूर्वी अफगानिस्तान, पंजाब, हरियाणा, कश्मीर, राजस्थान एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश। ऋग्वेद में वर्णित नदियों के नाम से हमें ऋग्वैदिक आर्यों के प्रसार की सूचना मिलती है। ऋग्वेद में ही मूजवंत पर्वत की चर्चा है, जिसकी पहचान हिमालय से की गई है। सम्भवतः यमुना नदी ऋग्वैदिक आर्यों की पूर्वी सीमा थी क्योंकि ऋग्वेद में यमुना की चर्चा तीन बार, जबकि गंगा की चर्चा एक ही बार हुई है। ऋग्वेद में सतलज नदी एवं यमुना नदी के बीच के भू-भाग को 'ब्रह्मवर्त' का नाम दिया गया है।

❑ उत्तर वैदिक काल (1000 ई.पू.-600 ई.पू.):

उत्तर वैदिक काल

- उत्तर वैदिक काल में आकर वैदिक आर्यों का विस्तार गंगा-यमुना ऊपरी दोआब में हुआ। ऊपरी दोआब के उत्तरी भाग में कुरु राज्य की स्थापना हुई। इस वंश के शासक के रूप में राजा परीक्षित और जन्मेजय का जिक्र मिलता है। कहा जाता है कि जन्मेजय ने दो सर्प सत्र यज्ञ कराए थे। ऊपरी दोआब के मध्य भाग में पांचाल राज्य की स्थापना हुई। प्रवाहण जैवालि नामक शासक पांचाल राज्य से ही संबद्ध था। उत्तर वैदिक काल के अन्त में सभ्यता का प्रसार मध्य गंगा घाटी में हुआ। इस क्रम में सरयू नदी के किनारे कौशल राज्य, वरणवती नदी के किनारे काशी राज्य और सदानीरा नदी (गंडक) के किनारे विदेह माधव ने विदेह राज्य की स्थापना की। इसकी सूचना हमें शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ से मिलती है।

❑ बुद्ध काल अथवा महाजनपद काल (600 ई.पू.-500 ई.पू.)

महाजनपद काल

- छठी सदी ई०पू० का काल गंगा घाटी में महान परिवर्तनों का काल था। यह वह काल था जब कबाइली समाज राजव्यवस्था के अंतर्गत संगठित होने लगा। इस काल तक आकर बड़े-बड़े राज्यों की स्थापना हुई। इन्हें महाजनपद का नाम दिया जाता है। एक बौद्ध ग्रंथ अंगुत्तर निकाय में 16 महाजनपदों का जिक्र हुआ है, जिनमें 14 राजतंत्र थे, जबकि दो गणतंत्र थे। ये निम्नलिखित हैं-

A	-	अवन्ति, अंग, अश्मक
C	-	चेदि (यमुना नदी के पास)
G	-	गांधार
K	-	काशी, कौशल, कुरू, कंबोज

M	-	मगध, मल्ल, मत्स्य
P	-	पांचाल
S	-	शूरसेन
V	-	वज्जि संघ, वत्स

- इन महाजनपदों में मगध, अवंति, वत्स और कौशल सर्वाधिक शक्तिशाली थे। अगर प्रसार की दृष्टि से देखें, तो उत्तर-पश्चिम में कम्बोज एवं गांधार, पूर्व में अंग तथा दक्षिण में अश्मक (गोदावरी नदी के निकट) महाजनपद स्थित थे। लेकिन, आगे मगध महाजनपद ने अपने विस्तार के क्रम में 14 महाजनपदों को अपने में समाहित कर लिया, जिसके परिणामस्वरूप आगे चलकर भारत का प्रथम साम्राज्य, मगध साम्राज्य स्थापित हुआ।

➢ मगध साम्राज्य का विस्तार -

- मगध साम्राज्य उत्तर-पश्चिम में व्यास नदी से लेकर दक्षिण में गोदावरी नदी तक फैला हुआ था। मगध साम्राज्य के विस्तार में भौतिक कारक और शासकों की भूमिका, दोनों का योगदान रहा था। भौतिक कारक में हम लौह भण्डार की उपलब्धता, गज सेना, मगध क्षेत्र की आर्थिक समृद्धि आदि की भूमिका को मान सकते हैं। वहीं शासकों की भूमिका को निम्नलिखित रूप में समझ सकते हैं-

- **बिम्बिसार-** बिम्बिसार के काल से ही राजवंश की ऐतिहासिकता स्पष्ट होती है। यह हर्यक वंश से जुड़ा हुआ था। यह लगभग छठी सदी ई.पू. के मध्य में आया था। इसने सैनिक प्रसार पर बल दिया तथा अंग महाजनपद को जीतकर तथा कोशल राज्य से दहेज के रूप में काशी को प्राप्त कर, मगध क्षेत्र का विस्तार किया था।
- **अजातशत्रु-** बिम्बिसार के उत्तराधिकारी अजातशत्रु ने मगध साम्राज्यवाद की परम्परा को आगे बढ़ाया। सर्वप्रथम उसने 16 वर्षों के निरन्तर प्रयत्नों के पश्चात् वज्जि संघ को जीतकर मगध साम्राज्य में मिला लिया। फिर, आगे कोशल महाजनपद के विरूद्ध भी उसे सफलता मिली तथा उसने कोशल को भी मगध साम्राज्य में मिला लिया।
- **उदयिन-** उसके उत्तराधिकारी उदयिन ने पाटलिपुत्र की स्थापना की।

- **शिशुनाग-** इसके अन्तर्गत मगध साम्राज्य का व्यापक प्रसार हुआ। शिशुनाग को एक शक्तिशाली महाजनपद अवंति के विरूद्ध सफलता प्राप्त हुई और उसने 100 वर्षों की प्रतिस्पर्द्धा का अंत करते हुए अवन्ति को मगध साम्राज्य में मिला लिया।
- **महापद्मनंद-** नंद वंश की स्थापना के साथ मगध साम्राज्य को और भी प्रगति मिली। महापद्मनंद एक महत्वपूर्ण शासक के रूप में स्थापित हुआ। उसने पूरब में कलिंग की ओर विस्तार किया तथा कलिंग को जीतकर मगध साम्राज्य में मिला लिया।

इस प्रकार, मगध महाजनपद कालीन भारत का पहला साम्राज्य बना जो उत्तर-पश्चिम में व्यास नदी से पूरब में बंगाल की सीमा तक और दक्षिण में गोदावरी नदी तक फैल गया।

❑ उत्तर-पश्चिम में होने वाली राजनीतिक उथल-पुथल तथा ईरानी एवं यूनानी आक्रमण:

- लगभग 516 ई.पू. में अखमिनी सम्राट डेरियस प्रथम ने उत्तर-पश्चिम भारत पर हमला कर उत्तर-पश्चिमी भारत के भू-भाग को जीत लिया। एक यूनानी विद्वान हेरोडोटस हमें सूचना देता है कि भारतीय क्षेत्र से उसे 307 टैलेंट सोना प्रति वर्ष राजस्व के रूप में प्राप्त होता था।
- ईरानी साम्राज्य के पतन के पश्चात् सिकन्दर का उद्भव हुआ और सिकन्दर ने भी उत्तर-पश्चिम भारत पर हमला किया। उसने सिंधु नदी को पार किया। सिन्धु एवं झेलम के बीच तक्षशिला (गांधार) के शासक राजा आम्भी ने समर्पण कर दिया। फिर आगे उसने झेलम एवं चेनाब के बीच राजा पोरस को पराजित किया। उस समय उत्तर-पश्चिम में राजतंत्र एवं गणतंत्र दोनों प्रकार के राज्य उपस्थित थे। गणतंत्र में कठ, सौभूति, अम्बष्ठ, मालव, क्षुद्रक आदि की चर्चा कर सकते हैं। सिकन्दर पूरब की तरफ बढ़ते हुए व्यास नदी तक पहुँच गया। उसके आगे मगध साम्राज्य था। अतः उसकी सेना ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया तथा उसे वापस लौटना पड़ा। भारत से लौटने से पूर्व उसने निम्नलिखित प्रशासनिक प्रबंधन किया-

- सिंधु नदी के पश्चिम का भाग गवर्नर फिलिप को, सिंधु एवं झेलम नदी के बीच का भू-भाग आम्भी को तथा झेलम एवं व्यास नदी के बीच का भू-भाग पोरस को सौंप दिया। उसने पर्याप्त संख्या में यूनानी सैनिकों को इन नगरों की सुरक्षा के लिए नियुक्त कर दिया। भारत से वापस लौटते समय रास्ते में सिकन्दर की मृत्यु हो गई।

▪ मौर्य काल (400 ई.पू.-200 ई.पू.)

मौर्य काल

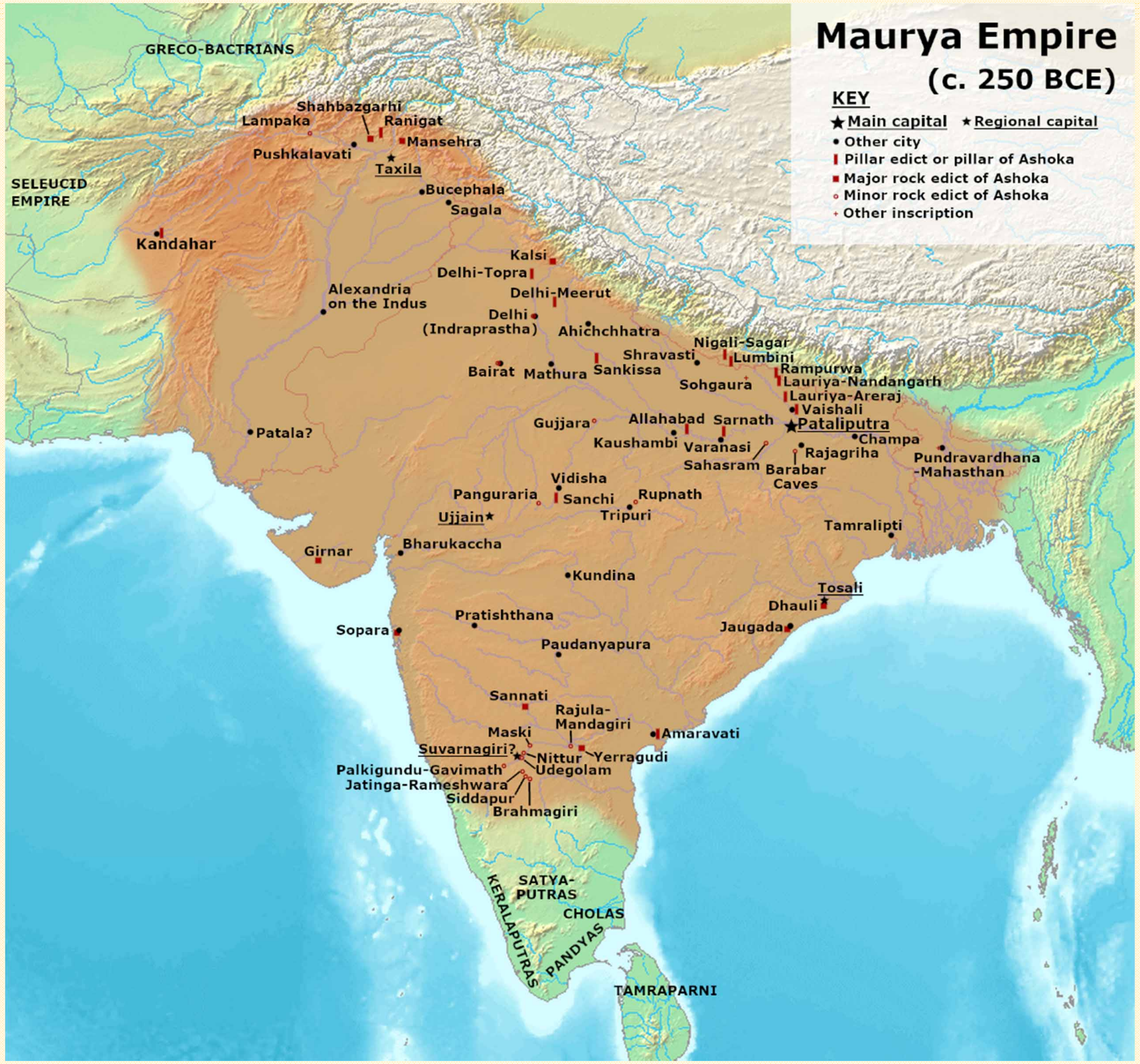

➢ चन्द्रगुप्त मौर्य (323 ई.पू.-298 ई.पू.)-

- मौर्य वंश का संस्थापक चन्द्रगुप्त मौर्य को माना जाता है। उसने एक वृहद् मौर्य साम्राज्य की स्थापना की और यह कार्य उसने कई चरणों में पूरा किया-

1. प्रथम चरण में सिकन्दर की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर उसने उत्तर-पश्चिम में सिन्धु नदी और व्यास नदी के बीच के भू-भाग को जीता। इसमें उसे अपने गुरू चाणक्य की सहायता मिली। इसकी सूचना हमें विशाखदत्त की कृति 'मुद्राराक्षस' से मिलती है।
2. दूसरे चरण में उसने लगभग 321 ई.पू. में मगध के शासक धनानंद का तख्ता पलटकर मगध साम्राज्य पर कब्जा कर लिया। इससे उसकी भौगोलिक सीमा दक्षिण में गोदावरी नदी तक पहुँच गई।

3. तीसरे चरण में उसने सेल्युकस निकेटर को लगभग 305 ई.पू. में सिन्धु नदी के किनारे पराजित किया। इसके एवज में उसे एरियाना का क्षेत्र मिला, जिसमें काबुल, कांधार, हेरात एवं बलूचिस्तान के भू-भाग शामिल थे। अतः अब उत्तर-पश्चिम में मौर्यों की सीमा हिन्दूकुश क्षेत्र तक पहुँच गई। सेल्युकस के साथ उसके राजनयिक संबंध स्थापित हुए तथा सेल्युकस ने राजदूत के रूप में पाटलिपुत्र दरबार में मेगस्थनीज को भेजा।

4. इस चरण में चन्द्रगुप्त मौर्य ने गोदावरी नदी से दक्षिण में कर्नाटक के ब्रह्मगिरी तक के क्षेत्र को जीता।

➢ बिन्दुसार (298 ई.पू.–273 ई.पू.)

- चन्द्रगुप्त के उत्तराधिकारी बिंदुसार ने भी पश्चिमी पड़ोसियों के साथ संपर्क बनाये रखा। ऐसा माना जाता है कि सीरिया के समकालीन शासक एंटियोकस प्रथम से उसने तीन वस्तुओं की माँग की थी- अंजीर, मदिरा एवं दार्शनिक। बताया जाता है कि दो वस्तुएं तो उसे मिल गयीं, किंतु सीरियाई शासक ने दार्शनिक भेजने से इंकार कर दिया क्योंकि उसका यह कदम अपने देश की विधि व्यवस्था के विपरीत जाता। बिंदुसार के दरबार में एक सीरियाई राजदूत डायमेकस रहा था। बिंदुसार के संबंध मिस्र के शासक टॉलेमी से भी रहे थे क्योंकि उसके दरबार में टॉलेमी का राजदूत डायोनिसियस भी रहा था। दक्षिण के पड़ोसियों से उसके क्या सम्बंध थे, यह स्पष्ट नहीं है। यद्यपि कुछ विद्वान प्रायद्वीपीय भारत को जीतने का श्रेय बिंदुसार को ही देते हैं।

➢ अशोक (269 ई.पू.–232 ई.पू.)

- अशोक ने कलिंग क्षेत्र के महत्व को देखते हुए अपने शासन के 9वें वर्ष में कलिंग को जीत लिया। फिर उसने अपने साम्राज्यवाद की प्राथमिकता बदल डाली। उसने नए क्षेत्र की विजय के बदले जीते गए क्षेत्रों के संगठन पर अधिक बल दिया। इस प्रकार, मौर्यों के अधीन एक विशाल साम्राज्य की स्थापना हुई, जो उत्तर–पश्चिम में हिन्दुकुश क्षेत्र से लेकर पूरब में बंगाल एवं दक्षिण में ब्रह्मगिरी तक पहुँच गया था। यह आगे आने वाले युगों के लिए एक आदर्श मॉडल बन गया।

❑ मौर्योत्तर काल (200 ई.पू.-300 ई.)

मौर्योत्तर काल

- इस काल में बहुराज्यीय व्यवस्था कायम हुई अर्थात् एक मौर्य साम्राज्य की जगह अनेक राज्य अस्तित्व में आए। इन्हें हम तीन श्रेणियों में बाँटकर देख सकते हैं; यथा- मौर्यों के उत्तराधिकारी राज्य, विदेशी आक्रमण से स्थापित राज्य तथा राज्य निर्माण के माध्यम से स्थापित राज्य।

➢ मौर्यों के उत्तराधिकारी राज्य-

1. शुंग राज्य (185 ई.पू.-75 ई.पू.)- इसका संस्थापक मौर्यों का ब्राह्मण सेनापति पुष्यमित्र शुंग था जिसने मौर्य शासक बृहद्रथ की हत्या कर शुंग वंश की स्थापना की। उसके दस उत्तराधिकारी हुए, तात्कालिक उत्तराधिकारी अग्निमित्र था, जिसके सम्मान में कालिदास ने 'मालविकाग्निमित्रम्' नामक रचना लिखी थी। इस वंश के एक शासक भागभद्र के दरबार में एक यूनानी शासक ने अपने राजदूत हेलियोडोरस को भेजा था, जिसने विदिशा नामक स्थान पर वासुदेव कृष्ण के सम्मान में एक 'गरुड़ ध्वज' की स्थापना की थी। इस वंश का अन्तिम शासक देवभूति था, जिसकी हत्या कर उसके ब्राह्मण मंत्री वासुदेव ने गद्दी पर कब्जा कर लिया।

2. **कण्व राज्य-** इस वंश का संस्थापक वासुदेव था। इस वंश के शासकों ने सिर्फ 45 वर्षों तक शासन किया (30 ई.पू. तक)। इसी अवधि में चार शासक हुए जो नाममात्र के थे। इनके नाम हैं- वसुदेव, भूमिमित्र (भूमित्र), नारायण और सुशर्मन। फिर सातवाहनों ने इसे उखाड़ फेंका।

➢ विदेशी आक्रमणों के द्वारा स्थापित राज्य-

- मध्य एशियाई जनजातियों का उत्तर-पश्चिम एवं उत्तर भारत पर निरन्तर आक्रमण होता रहा था और इन आक्रमणकारियों के द्वारा नए-नए राज्य स्थापित किए जाते रहे-
- **इंडोग्रीक-** इंडोग्रीक के दो राजवंशों ने भारत में समानान्तर रूप में शासन किया- डेमेट्रियस एवं यूक्रेटाइड्स। इन्होंने अपनी राजधानी क्रमशः शाकल एवं तक्षशिला को बनाया। इन राजवंशों के विषय में हमें सूचना इनके सिक्कों के माध्यम से मिलती है क्योंकि पहली बार इन्हीं राजवंशों के द्वारा शासकों के नाम से सिक्के जारी किए गए थे। डेमेट्रियस के वंश का ही एक शासक मिनाण्डर था जिसका वाद-विवाद एक भारतीय संत नागसेन के साथ हुआ था और फिर उसका संग्रह हमें 'मिलिन्दपन्हो' नामक बौद्ध ग्रंथ में मिलता है। मिनाण्डर का साम्राज्य झेलम से मथुरा तक विस्तृत प्रतीत होता है। उसकी राजधानी स्यालकोट थी।

- **शक राज्य-** वैसे तो भारत में शकों की कई शाखाएँ शासन करती रही थीं, परन्तु सबसे महत्वपूर्ण शाखा थी पश्चिमी शाखा। इस शाखा से संबंद्ध सबसे महत्वपूर्ण शासक था रूद्रदमन। इसने सुदर्शन झील की मरम्मत कराई थी और संस्कृत का पहला बड़ा अभिलेख, जूनागढ़ अभिलेख के रूप में जारी किया था। जूनागढ़ अभिलेख में उसे 'भ्रष्ट-राज-प्रतिष्ठापक' कहा गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त के समान उसने भी पराजित राजाओं के राज्य पुनः वापस कर दिये थे।
- **पार्थियन राज्य-** भारत में इस वंश का शासक गंडोफर्निस था। इसके काल में प्रथम ईसाई संत, सेंट टॉमस, का आगमन हुआ था।

- कुषाण राज्य- कुषाण युची जनजाति से सम्बद्ध थे। इन्हें संगठित करने का काम प्रथम सदी में कुजुल कडफिसस (40 ई.) एवं विम कडफिसस ने किया था। विम कडफिसस एक शैव था, उसके सिक्कों पर शिव, त्रिशूल एवं नंदी का चित्र है। इस वंश का प्रमुख शासक कनिष्क हुआ। 78 ई. में उसके सिंहासनारोहण के साथ शक संवत् का प्रारम्भ माना जाता है। कनिष्क की दो राजधानियाँ थीं- पुरुषपुर (पेशावर) एवं मथुरा। उसके काल में ही कश्मीर के कुण्डलवन में चौथी बौद्ध संगीति हुई। फिर उसी सम्मेलन में महायान बौद्ध पंथ एक पृथक शाखा के रूप में विकसित हुआ, फिर पश्चिम एशिया और मध्य एशिया में महायान बौद्ध पंथ को फैलाने का श्रेय कनिष्क को दिया जा सकता है।
- उसने एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी, जो मध्य एशिया में खुरासान से उत्तर भारत में बनारस तक फैला हुआ था। प्रसिद्ध रेशम मार्ग के भी एक भाग पर उसका नियंत्रण था अर्थात् वह रोमन साम्राज्य और चीनी साम्राज्य के समानान्तर रेशम मार्ग के संचालन में रुचि लेता था।

➢ राज्य-निर्माण के माध्यम से स्थापित राज्य-

- **सातवाहन राज्य-** सातवाहन शक्ति का संस्थापक सिमुक था, परन्तु इस वंश का सबसे महत्वपूर्ण शासक गौतमीपुत्र शातकर्णी को माना जाता है। इसने दूसरी सदी में शासन किया था। इसके विषय में हमें सूचना इसकी माता गौतमी बलश्री के नासिक अभिलेख से मिलती है। इस वंश का अन्तिम महान शासक यज्ञश्री शातकर्णी हुआ। इस वंश की स्थापना महाराष्ट्र क्षेत्र में हुई थी और फिर इसका प्रसार आंध्र एवं कर्नाटक क्षेत्र में देखने को मिलता है। तीसरी सदी में इस वंश का पतन हो गया। फिर इसके पश्चात् महाराष्ट्र क्षेत्र में वाकाटक राज्य और आंध्र क्षेत्र में इक्ष्वाकु राज्य की स्थापना हुई। वाकाटक राज्य का संस्थापक विंध्यशक्ति था। उसका पुत्र प्रवरसेन भी एक शक्तिशाली शासक था तथा उसने 'सम्राट' की उपाधि ग्रहण की थी। इसके समय वाकाटकों का साम्राज्य उत्तर के मध्य प्रांत तथा बुंदेलखंड से लेकर दक्षिण में उत्तरी हैदराबाद तक फैल गया।

- प्रवरसेन के पश्चात् उसका साम्राज्य दो भागों में विभक्त हो गया। एक भाग उसके पुत्र गौतमीपुत्र की अध्यक्षता में नागपुर में स्थापित हुआ, तो दूसरा सर्वसेन एवं उसके उत्तराधिकारियों के अधीन बरार के वत्सगुल्मा में। नागपुर केन्द्र के एक शासक रूद्रसेन द्वितीय का ही विवाह गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती गुप्त से हुआ था।
- कलिंग राज्य- कलिंग के शासक खारवेल का अभिलेख हाथीगुम्फा से मिला है। यह उदयगिरी की पहाड़ियों में स्थित है जो भुवनेश्वर के निकट है। खारवेल को कलिंग का महान शासक माना जाता है तथा उसकी अनेक सैन्य एवं सांस्कृतिक उपलब्धियाँ बताई जाती हैं, परन्तु इन्हें जानने का एक मात्र स्त्रोत हाथीगुम्फा अभिलेख है। इसी से हमें ज्ञात होता है कि चेदि वंश का संस्थापक महामेघवाहन नामक व्यक्ति था तथा खारवेल इस वंश का महानतम शासक था, 24 वर्ष की आयु में तथा 24 ई.पू. में वह सिंहासन पर बैठा।

- **चोल, चेर, पांड्य राज्य-** सुदूर दक्षिण में, इस काल में चोल, चेर और पांड्य राज्यों की सूचना मिलती है। इनके विषय में हमें आरंभिक सूचना अशोक के अभिलेख से मिलती है, जहाँ चोल, चेर और केरलपुत्र का जिक्र है, परन्तु वास्तविक रूप में राज्य निर्माण की प्रक्रिया प्रथम सदी अथवा दूसरी सदी में सम्भव हुई। चूंकि इनके विषय में हमें सूचना आरम्भिक तमिल साहित्य से मिलती है, जिसे संगम साहित्य का नाम दिया जाता है, इसलिए इन्हें संगम राज्य भी कहा जाता है।

❑ गुप्त काल (300 ई.- 600 ई.)

गुप्त काल

- **चन्द्रगुप्त प्रथम-** गुप्त शक्ति का वास्तविक संस्थापक चन्द्रगुप्त प्रथम था, जिसने प्रयाग क्षेत्र से उत्तर भारत में गुप्त राज्य का विस्तार किया। उसने अपनी विजय के उपलक्ष्य में 319-20 ई. में गुप्त संवत् की भी शुरूआत की। उसने लिच्छिवी राजकुमारी कुमारदेवी के साथ विवाह कर उत्तर भारत के एक महत्वपूर्ण राज्य-लिच्छिवी राज्य का समर्थन प्राप्त कर लिया। लिच्छिवियों के साथ अपने वैवाहिक संबंधों को गुप्त शासकों ने इतना अधिक महत्त्व दिया कि न केवल चन्द्रगुप्त प्रथम ने अपने सिक्के पर कुमारदेवी का नाम खुदवाया, वरन् समुद्रगुप्त ने भी लिच्छिवी दौहित्र की उपाधि ग्रहण की।
- **समुद्रगुप्त (335 ई.-380 ई.)-** समुद्रगुप्त ने एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की, जो उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विंध्य पर्वत तक तथा पूर्व में बंगाल की खाड़ी से लेकर पश्चिम में पूर्वी मालवा तक विस्तृत था। इसके विषय में हमें सूचना प्रयाग प्रशस्ति से मिलती है, जो उसके दरबारी लेखक हरिषेण के द्वारा लिखी गई।

- इलाहाबाद के प्रयाग-प्रशस्ति अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसने पाँच चरणों में अपना विजय अभियान पूरा किया। प्रथम चरण में उन्होंने गंगा-दोआब के नौ राज्यों का समूल नाश किया तथा प्रत्यक्ष रूप से अपने साम्राज्य में मिला लिया। द्वितीय चरण में उसने पंजाब के गणतंत्र तथा कुछ सीमावर्ती राज्यों को जीता। तृतीय चरण में उसने विंध्य क्षेत्र में आटविक राज्यों पर विजय प्राप्त की। फिर चौथे चरण में उसने पल्लव राज्य समेत दक्षिण के बारह राज्यों को जीता तथा अंतिम एवं पाँचवें चरण में उत्तर-पश्चिम में कुछ विदेशी राज्यों को पराजित किया। वी. ए. स्मिथ ने उसे भारत के नेपोलियन की संज्ञा दी है।

- **चन्द्रगुप्त द्वितीय या चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (380 ई.- 412 ई.)-** इसने शक शासक रुद्रसिंह तृतीय को पराजित कर गुजरात को जीता और गुजरात विजय के उपलक्ष्य में पहली बार चाँदी के सिक्के चलाए। दिल्ली में मेहरौली स्थित एक लौह स्तंभ पर 'चन्द्र' नामक शासक की विजय का विवरण है। इस 'चन्द्र' नामक शासक की पहचान चन्द्रगुप्त द्वितीय से ही की गई है। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने भी वैवाहिक संबंधों का उपयोग अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिये किया। उसने स्वयं नागवंश की राजकुमारी के साथ विवाह किया। माना जाता है कि प्रभावती गुप्त इसी विवाह की संतान थी। दूसरी तरफ उसने अपनी पुत्री का विवाह वाकाटक शासक रूद्रसेन द्वितीय से किया। जब वाकाटक शासक की मृत्यु हुई, तो सैद्धान्तिक रूप में सत्ता का संचालन तो उसकी पुत्री प्रभावती के पास रहा, परंतु व्यावहारिक रूप से वाकाटक राज्य का विलय गुप्त साम्राज्य में हो गया।

- **कुमारगुप्त प्रथम (412 ई.-454 ई.)-** कुमारगुप्त प्रथम चन्द्रगुप्त की पत्नी ध्रुवदेवी से उत्पन्न उसका सबसे बड़ा पुत्र था। विभिन्न स्रोतों से पता चलता है कि यद्यपि उसने कोई विजय नहीं की, तथापि उसके शासन काल का महत्व इस बात में है कि उसने अपने पिता के विशाल साम्राज्य को अक्षुण्ण बनाये रखा। मन्दसौर अभिलेख में उसके सुव्यवस्थित शासन का वर्णन मिलता है। यह नालंदा विश्वविद्यालय का संस्थापक था।
- **स्कन्दगुप्त (454 ई.-467 ई.)-** इसके काल में हूणों का पहला आक्रमण हुआ और इसने हूणों को पराजित किया था। इसकी सूचना हमें इसके जूनागढ़ अभिलेख से मिलती है। अपने पूर्वजों की तरह वह भी बहुमुखी प्रतिभा से युक्त सम्राट था। उसने जनता के कल्याण के लिये मौर्य सम्राट द्वारा निर्मित सुदर्शन झील की मरम्मत करायी, जिससे सौराष्ट्र प्रांत की जनता को पानी की समस्या का सामना न करना पड़े।
- छठी सदी ई. के मध्य में गुप्त साम्राज्य का विघटन हो गया और इसकी कब्र पर कई राज्य स्थापित हुए; यथा- स्थानेश्वर में पुष्यभूति, कन्नौज में मौखरि, वल्लभी में मैत्रक, बिहार में उत्तरगुप्त आदि।

❑ गुप्तोत्तर काल (600 ई.–750ई.)

हर्षवर्द्धन का साम्राज्य

➢ गुप्तोत्तर काल (600 ई.–750ई.)

- इस काल में उत्तर भारत में हर्षवर्द्धन के अधीन एक बड़े साम्राज्य की स्थापना हुई, वहीं दक्षिण भारत में चालुक्य शक्ति एवं पल्लव शक्ति स्थापित हुई।
- उत्तर भारत– उत्तर भारत में पुष्यभूति वंश के शासक के रूप में अपने भाई राज्यवर्द्धन की मृत्यु के पश्चात् हर्षवर्द्धन (606 ई.–647 ई.) का उद्भव हुआ। अपने बहनोई की मृत्यु के पश्चात् वह कन्नौज का भी शासक बन बैठा। इस कारण उसकी शक्ति काफी बढ़ गई और उसने उत्तर भारत में एक बड़े साम्राज्य की स्थापना की। आरम्भ में उसकी बंगाल में गौड़ प्रदेश के शासक शशांक के साथ प्रतिस्पर्द्धा हुई। शशांक की मृत्यु के पश्चात् ही वह गौड़ क्षेत्र पर कब्जा कर सका, परन्तु वह दक्षिण भारत की ओर नहीं जा सका क्योंकि वह चालुक्य शासक पुलकेशिन द्वितीय के हाथों पराजित हो गया।

- **दक्षिण भारत-** दक्षिण भारत में महाराष्ट्र क्षेत्र में चालुक्य शक्ति तथा दक्षिणी आंध्र एवं उत्तरी तमिलनाडु में पल्लव शक्ति की स्थापना हुई। चालुक्य वंश का संस्थापक पुलकेशिन प्रथम था, परन्तु इस वंश का महान शासक पुलकेशिन द्वितीय रहा था। वहीं पल्लव शक्ति का संस्थापक सिंहविष्णु था और इस वंश के महान शासक महेन्द्रवर्मन प्रथम, नरसिंहवर्मन प्रथम तथा नरसिंहवर्मन द्वितीय अथवा राजसिंह थे। नरसिंहवर्मन प्रथम ने पुलकेशिन द्वितीय को हराने के पश्चात् उसकी राजधानी बादामी पर कब्जा कर लिया तथा इसके उपलक्ष्य में उसने 'वातापीकोण्ड' की उपाधि धारण की।
- चूँकि दक्षिण में उपजाऊ क्षेत्र कम था, इसलिए कृष्णा-तुंगभद्रा दोआब क्षेत्र पर नियंत्रण के लिए दो राज्यों के बीच निरन्तर संघर्ष होता रहा। इसी क्रम में पुलकेशिन द्वितीय ने पल्लव शासक महेन्द्रवर्मन को पराजित कर उससे वेंगी का क्षेत्र छीन लिया था, परन्तु पल्लव शासक नरसिंह वर्मन प्रथम ने इसका बदला लेते हुए पुलकेशिन द्वितीय को पराजित कर मार डाला और उसकी राजधानी पर कब्जा कर लिया। फिर उसने 'महामल्ल' की उपाधि ली। इसी के नाम पर महाबलिपुरम् नाम पड़ा है। अंत में संघर्ष करते हुए दोनों राजवंशों का पतन हो गया।

❑ पूर्व मध्यकाल (750 ई.–1200 ई.)

पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट

THE MAP ARCHIVE
Copyright © Swanston Map Archive Limited. All Rights Reserved

➢ उत्तर भारतः-

- **पाल शक्ति-** हर्षवर्द्धन की मृत्यु के पश्चात् उत्तर भारत में थोड़े काल के लिए उथल-पुथल की स्थिति रही, फिर पूरब में पाल शक्ति की स्थापना हुई। इस शक्ति का संस्थापक गोपाल था और इस वंश के महत्वपूर्ण शासक धर्मपाल एवं देवपाल हुए थे। इस वंश के द्वारा बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया गया तथा धर्मपाल के अधीन ओदन्तपुरी, विक्रमशिला तथा सोमपुरा जैसे महत्वपूर्ण विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। पाल शासकों ने कन्नौज पर कब्जा करने के लिए प्रतिहार एवं राष्ट्रकूटों के साथ भी संघर्ष किया।
- **प्रतिहार शक्ति-** प्रतिहार शक्ति का संस्थापक नागभट्ट प्रथम था। फिर इस वंश का महत्वपूर्ण शासक वत्सराज, नागभट्ट द्वितीय और मिहिर भोज था। यह एक शक्तिशाली राजवंश था। इसने पालों और राष्ट्रकूटों के साथ संघर्ष कर कन्नौज पर अपना नियंत्रण बनाए रखा।

- **राजपूत राज्य-** निरंतर संघर्ष के कारण पाल और प्रतिहार, दोनों शक्तियों का पतन हो गया और उनकी कब्र पर छोटे-छोटे राज्य स्थापित हुए। इन्हें राजपूत राज्य का नाम दिया जाता है और इस काल को राजपूत काल कहा जाता है। ये राज्य इस प्रकार थे-

- **उत्तर-पश्चिम में पेशावर के पास हिन्दूशाही वंश-** इस वंश के महत्वपूर्ण शासक जयपाल एवं आनन्दपाल हुए। इस वंश ने उत्तर-पश्चिम की सुरक्षा के लिए महमूद गजनी से लंबा संघर्ष किया। इस वंश का अन्तिम शासक भीम था।
- **दिल्ली में तोमर वंश-** तोमर वंश के शासक अनंगपाल तोमर को दिल्ली अथवा ढिल्लिका को स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है। आगे दिल्ली पर चौहानों का नियंत्रण हुआ।
- **चौहान वंश-** ये शाकम्भरी से जुड़े रहे थे। आगे अजमेर एवं दिल्ली पर इन्होंने शासन किया। एक महत्वपूर्ण शासक विग्रहराज द्वितीय के समय दिल्ली चौहानों के नियंत्रण में आयी थी। पृथ्वीराज चौहान (पृथ्वीराज तृतीय) इस वंश का महान शासक हुआ।

- **गुजरात के अंहिलवाड़ा में सोलंकी वंश-** इस वंश के शासक भीम द्वितीय ने मोहम्मद गोरी को पराजित किया था।
- **चंदेल राज्य-** मध्य भारत में महोबा, खजुराहो और कालिंजर में चंदेल वंश की स्थापना हुई। इस वंश के महत्वपूर्ण शासकों में गंड, धंग एवं विद्याधर थे। इस वंश के शासकों ने महमूद गजनी के विरुद्ध राजपूत राज्यों के गठबंधन का नेतृत्व किया था।
- **गहड़वाल वंश-** प्रतिहार शक्ति के पतन के पश्चात् कन्नौज में गहड़वाल स्थापित हुए। गहड़वाल शासकों में चन्द्रदेव, मदनपाल, जयचंद आदि महत्वपूर्ण थे। इस वंश का संस्थापक गोविन्दचन्द था।
- **परमार वंश-** इस वंश का संस्थापक सीयक द्वितीय था। इस वंश का एक महान शासक भोज परमार था, जो साहित्य एवं कला का बड़ा संरक्षक था।

➢ दक्षिण भारत

- **महाराष्ट्र क्षेत्र-** इस क्षेत्र में 8वीं सदी के मध्य में राष्ट्रकूट शक्ति की स्थापना हुई। इस वंश का संस्थापक दन्तिदुर्ग था। उसने अन्तिम चालुक्य शासक कीर्तिवर्मन द्वितीय को निष्कासित कर अपने को स्थापित किया। उसका उत्तराधिकारी उसका चाचा कृष्ण प्रथम था, जिसने एलोरा के प्रसिद्ध कैलाश मंदिर का निर्माण करवाया। इस वंश में अनेक शक्तिशाली शासक हुए, जैसे- ध्रुव, गोविन्द द्वितीय, इन्द्र तृतीय, कृष्ण तृतीय। इन शासकों ने दक्षिण में भी विस्तार किया और उत्तर में कन्नौज पर हमला कर पाल और प्रतिहार राज्यों के साथ त्रिदलीय संघर्ष में शामिल हुए।
- इस वंश के अन्तिम शासक करक द्वितीय को गद्दी से हटाकर उसके सेनापति तैलप द्वितीय ने अपने राजवंश की स्थापना कर दी। चूंकि ये अपनी वंश परम्परा पुराने चालुक्यों से जोड़ते थे, इसलिए ये उत्तरवर्ती चालुक्य कहलाए। जहाँ पुराने चालुक्यों की राजधानी बादामी रही थी, वहीं इनकी राजधानी कल्याणी हो गई। इस वंश के महत्वपूर्ण शासकों में सोमेश्वर, सत्याश्रय, विक्रमादित्य पंचम आदि थे।

➢ सुदूर दक्षिण

- **चोल-** चोल शक्ति का संस्थापक विजयालय (850 ई.-875 ई.) था। इसका उत्तराधिकारी आदित्य प्रथम हुआ, जिसने अन्तिम पल्लव शासक अपराजित को गद्दी से निष्कासित कर अपने राज्य का विस्तार किया। उसका उत्तराधिकारी परान्तक प्रथम हुआ। यद्यपि इसने पांड्य शासक को पराजित किया था, परन्तु स्वयं राष्ट्रकूट शासक कृष्ण तृतीय के हाथों तक्कोलम के युद्ध में हार गया और अपना आधा भू-भाग गँवा बैठा।
- चोल शक्ति एक बार फिर राजाराज प्रथम (985 ई.-1014 ई.) के अन्तर्गत पुनर्जीवित हुई। राजाराज ने अपने सभी पड़ोसियों को पराजित किया तथा उत्तरी श्रीलंका को भी जीत लिया। उसने उत्तरी श्रीलंका का नाम मुम्माडिचोलपुरम रखा क्योंकि उसकी उपाधि थी 'मुम्माडिचोल'। उसके उत्तराधिकारी राजेन्द्र प्रथम ने उसके विस्तार की नीति को जारी रखा। उसने अपने सभी पड़ोसियों को पराजित किया, फिर उसने सम्पूर्ण श्रीलंका को जीत लिया। उसने उत्तर का अभियान कर बंगाल की विजय की तथा अपनी विजय के उपलक्ष्य में गंगईकोंडचोलपुरम् नामक मंदिर का निर्माण करवाया।

- फिर उसने दक्षिण-पूर्व एशिया के एक शक्तिशाली साम्राज्य श्री विजय अथवा शैलेन्द्र साम्राज्य के विरुद्ध सफलतापूर्वक नौसैनिक अभियान किया। चोलों के अधीन नौसेना ने हिन्द महासागर से बंगाल की खाड़ी तक अपनी धाक जमा दी।
- परन्तु 13वीं सदी के मध्य तक उत्तरवर्ती चालुक्य साम्राज्य और चोल साम्राज्य दोनों विघटित हो गए और उनकी कब्र पर निम्नलिखित राज्य स्थापित हुए-

1. देवगिरी में यादव राज्य
2. वारंगल में काकतीय राज्य
3. द्वारसमुद्र में होयसल राज्य
4. मदुरई में पांड्य राज्य

वैदिक काल से पूर्व मध्यकाल तक प्रशासन के क्षेत्र में परिवर्तन

(Changes in Administration from Vedic period to Pre Medieval Period)

वैदिक काल से पूर्व मध्यकाल तक प्रशासन के क्षेत्र में परिवर्तन

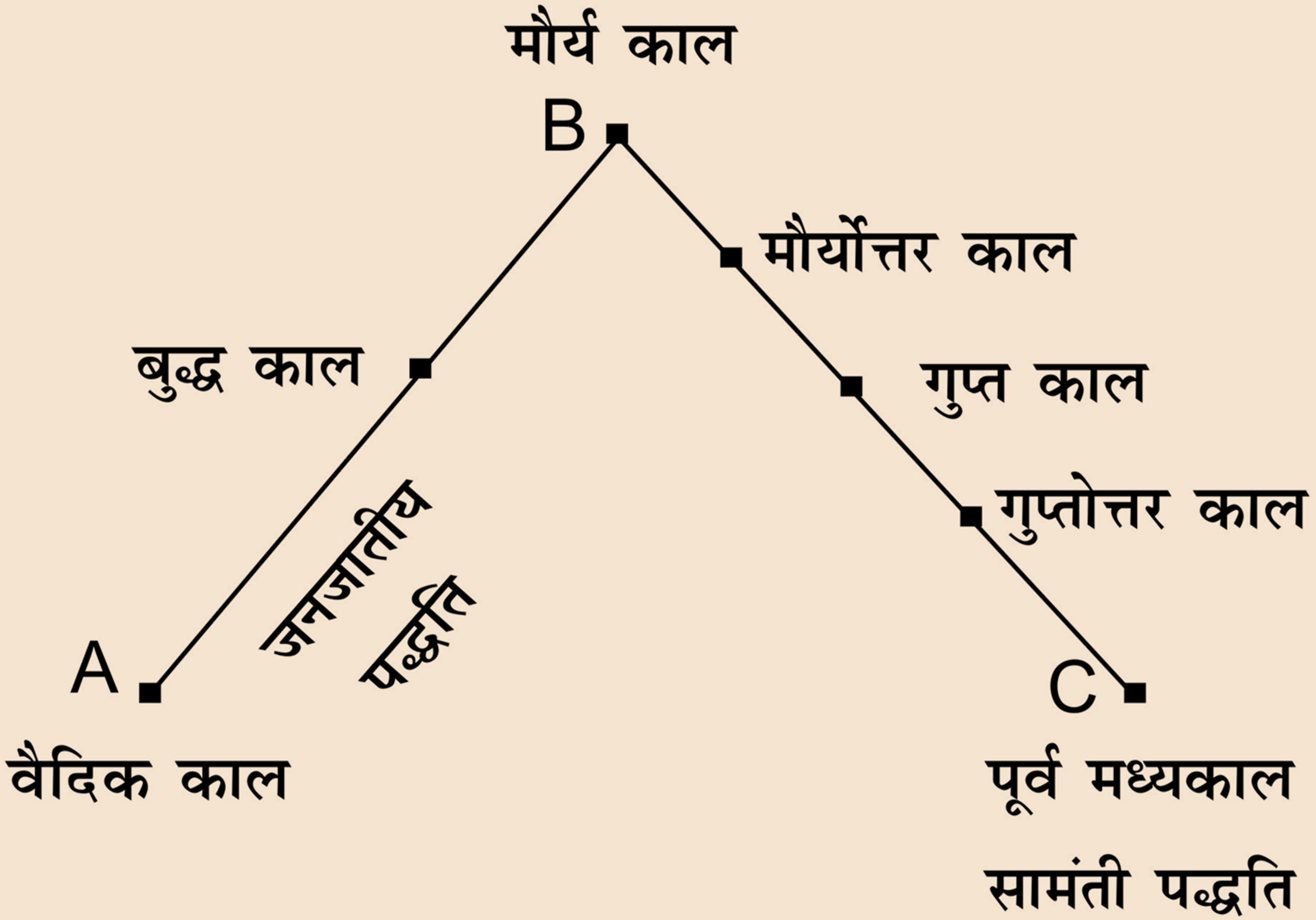

- उपर्युक्त डायग्राम यह दर्शाता है कि वैदिक काल से मौर्यकाल तक आते हुए प्रशासनिक केन्द्रीयकरण में वृद्धि हुई क्योंकि धीरे-धीरे अर्थव्यवस्था का विस्तार हुआ, राज्य के संसाधनों में वृद्धि हुई तथा कर प्रणाली स्थापित हुई। इसके परिणामस्वरूप शक्तिशाली सेना एवं सक्षम नौकरशाही का गठन हुआ।
- परन्तु मौर्य काल से पूर्व मध्यकाल तक आते हुए भूमि अनुदान के कारण प्रशासनिक केन्द्रीयकरण में ह्रास होता गया, अधिकारियों की संख्या कम होती गई, मध्यस्थ और बिचौलिये कम होते गए तथा राजा का सैन्य आधार भी कमजोर हुआ। इन परिवर्तनों की पहचान भारतीय सामंतवाद के उद्‌भव के रूप में की जाती है। इन परिवर्तनों को निम्नलिखित कालों में बाँटकर देखा जा सकता है-

❑ ऋग्वैदिक कालः

- ऋग्वैदिक काल में राज्य जन आधारित था तथा राजा की स्थिति स्पष्ट नहीं थी। राजा को 'जनस्य गोप' कहा जाता था अर्थात् राजा को कबीले के मुखिया के रूप में देखा जाता था। इस काल में कर प्रणाली स्थापित नहीं थी। कर के रूप में बलि की चर्चा मिलती है, परंतु बलि एक स्वैच्छिक भेंट थी, कोई अनिवार्य कर नहीं। इसीलिए युद्ध में प्राप्त लूट का एक भाग राजकीय आमदनी का मुख्य स्रोत था।
- ऋग्वैदिक काल में स्थाई सेना एवं स्वतंत्र नौकरशाही का विकास नहीं हुआ था। कबीले के लोगों से सैनिक सेवा ली जाती थी। उसी प्रकार, अधिकारी भी उसी समूह से लिए जाते थे तथा अधिकारियों की संख्या भी अपेक्षाकृत सीमित थी। ये अधिकारी थे- युवराज, पुरोहित, सेनानी, ग्रामिणी, विशपति आदि।

- ऋग्वैदिक काल में राजपद पर अंकुश लगाने वाली कुछ जनजातीय संस्थाएँ मौजूद थीं। उदाहरण के लिए सभा, समिति, विदथ एवं गण। सभा वरिष्ठ जनों की संस्था थी तथा यह न्यायिक कार्य से जुड़ी हुई थी। समिति शैक्षणिक कार्य से संबंधित थी, साथ ही इसके द्वारा राजा का निर्वाचन किए जाने का विवरण भी प्राप्त होता है। विदथ संभवतः सैनिक कार्यों से जुड़ी हुई संस्था थी, वहीं गण एक सामान्य गणतंत्रात्मक संस्था का बोध कराती है।
- प्रशासन की सबसे छोटी इकाई गृह अथवा कुल थी, उसके ऊपर ग्राम, फिर विश और सबसे ऊपर जन था। चूँकि लोग स्थायी जीवन नहीं जीते थे, इसलिए 'जनपद' शब्द का प्रयोग नहीं मिलता है।

❑ उत्तर वैदिक कालः

- उत्तर वैदिक काल तक कृषि व्यवस्था स्थापित होने के कारण राज्य के संसाधनों में थोड़ी वृद्धि हुई, इसलिए राजा की स्थिति भी पहले से बेहतर हुई। फिर राजा के पद के साथ यज्ञ भी जुड़ गया, इस कारण भी राजा की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। इस काल में कर प्रणाली तुलनात्मक रूप में स्थापित हो गई। बलि स्वैच्छिक कर से अनिवार्य कर हो चुका था। इसके अतिरिक्त, इस काल में भाग एवं शुल्क नामक कर का भी विवरण प्राप्त होता है। भाग भू-राजस्व का 16वाँ भाग था, वहीं शुल्क वस्तुओं पर चुंगी थी।
- उत्तर वैदिक काल में भी स्थायी सेना एवं रक्त संबंध से पृथक नौकरशाही का विकास नहीं हो सका, परंतु अधिकारियों की संख्या में निश्चय ही वृद्धि हुई। उदाहरण के लिए, उत्तर वैदिक ग्रंथ से 12 रत्निनों का जिक्र मिलता है।
- प्रशासन की सबसे बड़ी इकाई के रूप में जनपद स्थापित हुआ। इस काल तक अकार जनजातीय संस्थाओं की शक्ति को धक्का लगा। विदथ एवं गण लुप्त हो गईं, जबकि सभा एवं समिति ने अपने पहले की शक्ति तथा महत्व को खो दिया।

बुद्ध काल:

- इस काल में कृषि अर्थव्यवस्था के प्रसार एवं द्वितीय नगरीकरण के आरम्भ होने के कारण राज्य के संसाधनों में वृद्धि हुई। अतः कर प्रणाली पूरी तरह स्थापित हुई। इस काल में हमें रज्जुग्राहक नामक अधिकारी का जिक्र मिलता है, जो दर्शाता है कि अब भूमि माप के पश्चात् भूराजस्व का निर्धारण होने लगा था।
- इस काल में पहली बार स्थाई सेना और स्वतंत्र नौकरशाही का विकास हुआ। मगध के शासक बिंबिसार को श्रेणिक बिंबिसार कहा गया अर्थात् सेना का बिंबिसार। साथ ही, लेखन कला के विकास के परिणामस्वरूप राजकीय दस्तावेज अस्तित्व में आया और उससे जुड़ा हुआ अधिकारी 'अक्षपटलाधिकृत' कहा जाता था। इस काल में प्रशासन की सबसे छोटी इकाई के रूप में पहली बार ग्राम स्थापित हुआ।

❑ मौर्य कालः

- प्रशासन के शीर्ष पर राजा था। मौर्य शासकों ने देवानामपिय्य की उपाधि ग्रहण की। मौर्यों के अन्तर्गत राज्य के पास अपार संसाधन तथा एक अखिल भारतीय साम्राज्य का विकास हुआ। इसके परिणामस्वरूप इस काल में अधिकारियों की संख्या में वृद्धि हुई। एक मजबूत सैन्य व्यवस्था स्थापित हुई तथा प्रशासनिक केन्द्रीयकरण को प्रोत्साहन मिला। इस काल में राज्य का एक लोककल्याणकारी रूप भी उभरता है।
- कौटिल्य के अर्थशास्त्र, मेगस्थनीज की इण्डिका एवं अशोक के अभिलेखों से मौर्यकालीन प्रशासन का जिक्र मिलता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में केन्द्रीय प्रशासन में 18 तीर्थ अथवा महामात्र एवं 27 अध्यक्षों का जिक्र किया गया है। ये अध्यक्ष विभिन्न विभागों के प्रधान होते थे।

मौर्य प्रशासन

- साम्राज्य
  - प्रांत → कुमार अथवा आर्यपुत्र
    - जिला →
      - युक्त — लिपिक
      - रज्जुक — राजस्व प्रशासन एवं न्याय
      - प्रादेशिक — सामान्य प्रशासन
      - गाँवों का समूह →
        - गोप — सामान्य प्रशासन (जनगणना)
        - स्थानिक — राजस्व प्रशासन
        - गाँव → ग्रामिक

- साम्राज्य का विभाजन प्रान्तों में होता था। इस काल में चार प्रान्तों की सूचना मिलती है। प्रांत का प्रधान 'कुमार' अथवा 'आर्यपुत्र' नामक अधिकारी होता था। नाम से ज्ञात होता है कि सम्भवतः वे राजकीय परिवार से संबद्ध थे। उनके कार्यों में सहायता एवं मंत्रणा के लिए एक मंत्रिपरिषद् होती थी। परंतु इस मंत्रिपरिषद् को अधिक विवेकाधीन शक्तियाँ प्राप्त थीं। उदाहरण के लिए, वह कुछ महत्वपूर्ण बातों की सूचना कुमार को दिए बिना सीधे राजा तक प्रेषित कर सकती थी।
- प्रान्त का विभाजन जिलों में होता था। जिलाधिकारी के रूप में हमें युक्त, रज्जुक एवं प्रादेशिक नामक अधिकारियों की सूचना प्राप्त होती है। इन अधिकारियों की नियुक्ति केन्द्र द्वारा होती थी। प्रादेशिक शीर्षस्थ अधिकारी होता था तथा सामान्य प्रशासन से संबंधित होता था। प्रादेशिक का काम अपने जिले में गाँवों तथा नगरों में होने वाली आय की देख-रेख करना तथा कानून व्यवस्था का निरीक्षण भी था। रज्जुक नामक अधिकारी विशेष रूप से न्यायिक कार्यों से जुड़ा था तथा राजस्व प्रशासन का कार्य भी करता था। युक्त, सचिव और लिपिक का कार्य करता था तथा वे राजकीय कर को वसूलने वाले विभाग से संबद्ध थे तथा रज्जुक के अधीन कार्य करते थे।

- जिले से नीचे प्रशासन की एक इकाई के रूप में गाँवों का एक समूह स्थापित था। इस पर गोप एवं स्थानिक नामक अधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी। गोप नामक अधिकारी सामान्य प्रशासन के साथ-साथ जनगणना से भी संबद्ध था, वहीं स्थानिक का मुख्य कार्य करों (भू-राजस्व) की वसूली था। प्रशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी तथा गाँव का मुखिया ग्रामिक कहलाता था।
- मेगस्थनीज की इण्डिका में नगर-प्रशासन की चर्चा की गई है, जिसमें एग्रोनोमई नामक अधिकारी को मार्ग-निर्माण से संबंधित तथा नगर कमिश्नर को एरिस्टोनोमई कहा गया है।

❑ मौर्योत्तर काल (200 ई.पू.–300 ई.)

➢ विशेषताएँ:

1. शक, कुषाण एवं सातवाहन शासकों ने भारतीय राज्यों को पराजित किया, परन्तु उन्हें विस्थापित न करके उन्हें अधीनस्थ शासक के रूप में बने रहने दिया। इस तरह राज्य के अधीन राज्य की स्थिति उत्पन्न हुई। इसका निम्नलिखित परिणाम सामने आया–

i. राजकीय उपाधि में अन्तर आ गया और अधीनस्थ शासकों से अपने आप को पृथक् करने के लिए बड़े शासकों ने भारी भरकम उपाधियाँ लेनी प्रारम्भ कर दीं। कुषाण शासकों द्वारा धारण की जाने वाली प्रभावशाली उपाधियाँ जैसे- महेश्वर, सर्वलोकेश्वर, शाहानुशाही आदि इस तथ्य को प्रकट करती हैं कि उसके अधीन कई छोटे राजा थे जो उन्हें सैनिक सेवा प्रदान करते थे।

ii. उपर्युक्त व्यवस्था की वजह से राज्य के अधीन ही अनेक स्वायत्तता प्राप्त इकाईयों का उदय हुआ, जो प्रकारांतर से सामंती व्यवस्था का आधार बन गया।

iii. कौटिल्य के अर्थशास्त्र में इस प्रकार की विजय को धर्म विजय का नाम दिया गया है।

2. मौर्योत्तर काल में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रखने के लिये राजतंत्र में दैवीय तत्वों को समाविष्ट करने की प्रवृत्ति अपनाई गई। अब राजाओं की तुलना देवताओं से की जाने लगी। उदाहरण के लिए, सातवाहन शासकों ने अपनी तुलना देवताओं से की तथा कुषाणों ने 'देवपुत्र' की उपाधि धारण की। इसके साथ कुषाण शासकों ने मंदिर में भी अपनी मूर्ति स्थापित की। उदाहरण के लिए, मथुरा के माट नामक स्थान पर निर्मित मंदिर।

3. सातवाहन शासकों ने पहली बार प्रथम सदी में भूमि अनुदान आरम्भ किया, परन्तु ये अनुदान धार्मिक अनुदान थे जो ब्राह्मण अथवा बौद्ध भिक्षुओं को दिए जाते थे। उन्हें केवल राजस्व का अधिकार था, प्रशासन का अधिकार नहीं। भूमि अनुदान को प्रेरित करने वाले कई कारक थे। प्रथम, भूमि अनुदान के माध्यम से दूरस्थ क्षेत्र में कृषि का प्रसार संभव था क्योंकि अनुदान में दी गई भूमि का एक भाग गैर आबाद भूमि का होता था। फिर भूमि अनुदान के माध्यम से राजा ने अपनी शक्ति एवं प्रभाव का विस्तार करना चाहा। इसके माध्यम से जनजातीय क्षेत्र में आर्य संस्कृति का भी प्रसार संभव हुआ।

❑ गुप्त काल (300 ई.-600 ई.)

- गुप्तकालीन प्रशासन एक संक्रमण की अवस्था को दर्शाता है। यह मौर्यकालीन प्रशासन एवं मध्यकालीन प्रशासन के बीच एक कड़ी है। इस काल में एक तरफ राजा की उपाधियों में वृद्धि होने लगी, किन्तु दूसरी तरफ उसकी वास्तविक शक्ति में ह्रास हुआ तथा इसका कारण था- मध्यस्थ एवं बिचौलियों की उपस्थिति। फिर भूमि अनुदान के माध्यम से राज्य अपने दायित्व को सीमित कर रहा था। गुप्तकालीन प्रशासन में स्थानीय तत्वों की भागीदारी बढ़ गई।

➢ विशेषताएँ:

1. प्रशासन के शीर्ष पर राजा था। राजा के द्वारा 'परम्भट्टारक' एवं 'महाराजाधिराज' जैसी भारी-भरकम उपाधियाँ ली गईं, किन्तु ये राजा की बढ़ती हुई शक्ति को नहीं दर्शातीं, वरन् ये अधीनस्थ शासक एवं सामंतों की उपस्थिति की ओर संकेत करती हैं।

2. इसके अतिरिक्त ‘दैवीय राजत्व’ को प्रोत्साहन मिला तथा राजा अपनी तुलना देवताओं से करने लगे। ‘प्रयाग-प्रशस्ति’ में समुद्रगुप्त ने अपनी तुलना चार महत्वपूर्ण देवताओं; यथा- इन्द्र, वरूण, अन्तका (यम) तथा धनदा (कुबेर) से की है।

3. केन्द्रीय प्रशासन में कुछ महत्वपूर्ण अधिकारियों का जिक्र हुआ है, यथा- कुमारामात्य, संधिविग्रहक (विदेश मंत्री), दंडनायक एवं महादंडनायक (न्याय का कार्य), बलाधिकृत एवं महाबलाधिकृत (सैन्य विभाग), विनयस्थितिस्थापक (धार्मिक कार्य), प्रतिहार एवं महाप्रतिहार (राजमहल की सुरक्षा) आदि। ‘कुमारामात्य’ वरिष्ठ अधिकारियों के एक वर्ग की ओर संकेत करता है।

4. इस काल में अधिकारियों के पद वंशानुगत होने लगे थे तथा एक अधिकारी को एक से अधिक पद दिये जाने लगे थे। उदाहरण के लिए, हरिषेण एक ही साथ महादण्डनायक, संधिविग्रहक एवं कुमारामात्य के पद को सुशोभित कर रहा था।

5. साम्राज्य का विभाजन प्रांतों में था। प्रांतों को 'भुक्ति' कहते थे। भुक्ति पर 'उपरिक' अथवा 'उपरिक महाराज' नामक अधिकारी की नियुक्ति की जाती थी। दामोदरपुर अभिलेख एवं एरण अभिलेख दोनों में उपरिक नामक अधिकारी के साथ 'महाराज' शब्द के प्रयोग से ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्वकाल की तुलना में इस काल में प्रांतीय अधिकारी अधिक शक्ति का उपभोग करते थे।

6. प्रांतों का विभाजन जिलों अथवा 'विषयों' में था। जिला प्रशासन में 'विषयपति' अथवा 'कुमारामात्य' नामक अधिकारी की नियुक्ति की जाती थी। अधिकतर स्थिति में जिला अधिकारी की नियुक्ति 'उपरिक' अथवा 'उपरिक महाराज' के द्वारा की जाती थी।

7. जिला का विभाजन गाँवों के समूह में होता था। उसे 'वीथी' अथवा 'पेठ' कहा जाता था। इस पर 'वीथी महात्मया' नामक अधिकारी की नियुक्ति की जाती थी। प्रशासन की सबसे छोटी इकाई 'ग्राम' थी, जो 'महत्तर' के अधीन होता था।

8. गुप्तकालीन प्रशासन की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी- स्थानीय प्रशासन में क्षेत्रीय तत्वों की भागीदारी। जिला स्तर पर एक जिला परिषद् होती थी, इसे 'विषय-अधिकरण' कहा जाता था। वीथी के स्तर पर वीथी परिषद् और नगर में नगर परिषद् अथवा अधिस्थानाधिकरण नामक संस्था का गठन होता था। इसके सदस्य के रूप में निम्नलिखित की चर्चा की गई है, यथा- नगरश्रेष्ठी (वित्त प्रबंधक), सार्थवाह (व्यापारियों का प्रधान), प्रथम कुलिक (शिल्पियों का प्रधान), प्रथम कायस्थ (लिपिकों का प्रधान)। उसी प्रकार वीथी के स्तर पर कुटुम्बिन (किसान), महत्तर (मुखिया) का विवरण मिलता है।

❑ गुप्तोत्तर काल (600 ई.–750 ई.)

➢ **विशेषताएँ:**

1. इस काल में भी राजत्व का दैवीकरण जारी रहा तथा शासकों के द्वारा भारी–भरकम उपाधियाँ ली जाती रहीं।

2. इस काल में राजकीय अधिकारियों को भी भूमि अनुदान में वेतन मिलने लगा क्योंकि व्यापार के पतन के कारण मुद्राओं की कमी पड़ गई थी। उदाहरण के लिए, हर्ष के शासन में मंत्रियों और अधिकारियों को भूमि अनुदान के रूप में वेतन मिलता था, न कि नकद में।

3. इस काल में नौकरशाही का सामंतीकरण हुआ क्योंकि सामतों को भी महत्वपूर्ण प्रशासनिक पद दिए जाने लगे।

❑ पूर्व मध्यकाल (750 ई.–1200 ई.)

➢ विशेषताएँ:

1. राजत्व का दैवीकरण।
2. राजा के द्वारा भारी-भरकम उपाधियाँ लिया जाना।
3. कुछ महत्वपूर्ण सामंतों को अधिकारी का पद मिला, वहीं अधिकारियों को भी सामंतों की उपाधि प्राप्त होने लगी।
4. इस काल में मंदिरों एवं मठों को भी बड़ी संख्या में भूमि अनुदान दिए गए।
5. इस काल में सैनिक अनुदानों की संख्या में वृद्धि हुई। उदाहरण के लिए, पाल, प्रतिहार और राजपूत शासकों ने बड़ी संख्या में सामंतों को भूमि अनुदान दिए तथा सामंतों के द्वारा बदले में उन्हें सैनिक सेवा प्रदान की जाती थी। इस प्रकार, पूर्व मध्यकाल तक आकर भारतीय सामंतवाद के सभी लक्षण प्रकट होने लगे।

6. इस काल में दक्षिण भारत में चोलों के अधीन स्थानीय स्वायत्त शासन की स्थापना हुई। इसके अन्तर्गत स्थानीय प्रशासन में स्थानीय तत्वों को भागीदारी दी गई। इसकी सूचना हमें उत्तरमेरूर अभिलेख से मिलती है। इसके तहत नाडु के स्तर पर नट्टार नामक संस्था का गठन किया जाता था, जबकि गाँव के स्तर पर उर एवं सभा का गठन किया जाता था।

*****

END

Thank You!